International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(4): 218-223

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(4): 218-223
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 25-05-2019
Accepted: 27-06-2019

Dr. Chander Kant
Assistant Professor/Head, Department of Astrology (Faculty of Alternative Theraphy), Mewar University, NH – 79, Gangrar, Chittaurgarh, Rajasthan, India

Correspondence
Dr. Chander Kant
Assistant Professor/Head, Department of Astrology (Faculty of Alternative Theraphy), Mewar University, NH – 79, Gangrar, Chittaurgarh, Rajasthan, India

वैदिक वांग्मय में गणित विज्ञान की श्रुतिमूलकता

Dr. Chander Kant

सारांश
वैदिक वांग्मय का मूलाधार वेद अपने गर्भ में असंख्य शास्त्रों एवं विद्याओं को पल्लवित एवं पुष्पित करता रहा है। वैदिक वांग्मय विश्व वांग्मय मे मूर्धन्य स्थान में सुशोभायमान है। इसके अन्तर्गत वेद अथवा संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद एवं वेदांग् सम्मिलित हैं। आधुनिक युग भौतिक प्रगति का युग है। मानव समाज का ढांचा आर्थिक है, और अर्थ या धन का आधार गणित है। व्यापार में तोल-भाव, लाभ-हानि, ब्याज, कमीशन, दलाली, सांझा, आयकर इत्यादि सभी में गणित के ज्ञान की आवश्यकता होती है। रेखागणित, भूमिति, ज्यामिति, त्रिकोणमिति इत्यादि गणितीय विधियों का आरम्भ गणितीय प्रक्रियाओं को सरल रीति से समझने के लिए हुआ है। गणित का प्रयोग प्रत्येक कला और विज्ञान में हुआ है। चित्र कला का आधार रेखागणित है। संगीत कला में स्वरों का निर्देशन, तार की लम्बाईयों तथा कंपन संख्याओं से ही होता है। बांसुरी में सप्तक के स्वरों को उत्पन्न करने के लिए छेद गणित के अनुसार किए जाते हैं। पिंगल शास्त्र के गण शब्द की उत्पत्ति गणना से ही हुई है। भौतिक शास्त्र जिसने वेतार के तार आदि से युग परिवर्त्तन कर दिया है, पूर्णतः गणित पर अवलम्बित है। रेडियों की तरंगों की उपस्थिति सर्वप्रथम गणित द्वारा ही सिद्ध की गई। आकाशीय पिण्डों से सम्बन्धित अध्ययन शास्त्र ज्योतिषशास्त्र का आधार स्तम्भ गणित है। स्वयं ही प्रकृति भी गणितमय है। नियमानुसार हमारे जीवन का प्रत्येक क्षेत्र भी गणित पर आधारित है। वैदिक वांग्मय में गणित के प्रारम्भिक इतिहास के बारे में अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य दृष्टिपथ होते हैं। यद्यपि वर्तमान समय में अध्ययन की विभिन्न शाखाओं में विशिष्टीकरण दृष्टिभूत हो रहा है, तथापि शास्त्रों में अंगागिभाव सम्बन्ध होने के कारण एक शास्त्र के ज्ञान के लिए अनेक शास्त्रों का सामान्य ज्ञान होना आवश्यक समझा जा सकता है।

कुट शब्द: वैदिक वांग्मय में गणितीय विधियाँ, शून्य का आविष्कार तथा महत्त्व, दशमलवांक प्रणाली, बौधायन पाइथोगोरस प्रमेय, वर्गमूल और भूपरिधि मान इत्यादि।

प्रस्तावना
विश्व में गणित विज्ञान की उपादेयता छिपी हुई नहीं है। गणित विज्ञान की आधारशिला पर ही अन्य समग्र विज्ञानों का विकास एवं मूल्यांकन हो रहा है। खगोल ज्ञान, जिसे गणित का एक आवश्यक अंग समझा जाता है, गणित के अभाव में अपना कोई महत्त्व नहीं रखता। इसी तथ्य की पृष्टि में शास्त्रें का विचार है, कि गणित ज्ञान के बिना खगोल ज्ञान असंभव है। जैसा कि कहा भी गया है-

'अन्तरेण गणितं गोलोऽपि न ज्ञायते, तस्माद्यो गणितं न वेत्ति स कथं गोलादिकं ज्ञास्यति' [1] ।।

गणित के अनेक भेदों में व्यक्त (अंकगणित), अव्यक्त (बीजगणित) नामक दो प्रमुख भेद हैं। यद्यपि वर्तमान समय में अध्ययन की विभिन्न शाखाओं में विशिष्टीकरण हो रहा है, तथापि शास्त्रें में अंगागिभाव सम्बन्ध होने के कारण एक शास्त्र के ज्ञान के लिए अनेक शास्त्रें का सामान्य ज्ञान आवश्यक समझा जा सकता है। इसी सन्दर्भ में ज्योतिर्विज्ञान के सुप्रसिद्ध खगोलविद भास्कराचार्य ने भी कहा है, कि अनेक प्रकार के गणितों तथा शब्दशास्त्र ज्ञान के अनन्तर ही शिष्यपरम्परा का कोई उत्तम विद्यापात्र शिष्य ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान प्राप्ति का अधिकारी हो सकता है। जैसा कि कहा भी गया है-

द्विविधगणितमुक्तं व्यक्तमव्यक्तयुक्तं तदवगमनिष्ठः शब्दशास्त्रे प्रतिष्ठः ।
यदि भवति तदेदं ज्योतिषं भूरिभेदं प्रपठितुमधिकारी सोऽन्यथा नामधारी [2] ।।

वेद की अनन्त ज्ञानराशि सनातन अगाध तथा अपरिवर्तनीय रत्नाकर के समान है। इस अक्षुण्ण ज्ञान कोष में से विद्वानों ने सांस्कृतिक, राजनैतिक, कला-कौशल, कृषिशास्त्र आदि अनेक तत्वों को मक्खन के समान समाज को प्रदान किये हैं। ज्योतिष तथा गणित शास्त्र की श्रुतिमूलकता के सन्दर्भ में सर्वप्रथम वेदों के अन्तर्गत गणित के अंकुरों पर विचार किया गया है। स्थूल रूप से गणित के भेदों में व्यक्त गणित के अन्तर्गत कल्पित अंको द्वारा संयोग, वियोग, गुणा, भाग इत्यादि प्रक्रिया द्वारा गणित की क्रियाओं को साधित किया जाता हैं। एवं अव्यक्त गणित में कल्पित अंक के स्थान पर अक्षर को मानकर संयोग, वियोग, गुणा, भाग आदि प्रक्रिया द्वारा गणितीय क्रियाओं को साधित किया जाता है। व्यक्त गणित का बीज अव्यक्त गणित हैं और अव्यक्त गणित ब्रह्म स्वरूप माना गया है। यह अपने उदर में समस्त राशियों को आत्मसात कर लेता है, जैसा कि भास्कराचार्य ने अपने बीजगणित में एक श्लोक के माध्यम से प्रतिपादित किया है –

अस्मिन् विकारः खहरे न राशावपि प्रविष्टेष्वपि निःसृतेषु ।
बहुष्वपि स्याल्लयसृष्टिकालेऽनन्तेऽच्युते भूतगणेषु यद्वत् ।। [3]

शून्य से भाग देने पर किसी भी राशि की अनन्त लब्धि आती है। जैसे सृष्टि के अनन्त जीव प्रलय काल में अच्युत के उदर में समा जाते हैं। सर्वप्रथम अव्यक्त गणित में मान निर्धारण के लिए यावद् तावत् इत्यादि की कल्पना की गई थी। भास्कराचार्य ने इसका भी संकेत बीजगणित में किया है –

यावत्तावत् कालको नीलकोऽन्यो वर्णः पीतो लोहितश्चैतदाद्या ।
अव्यक्तानां कल्पितानां मानसंज्ञास्तत्संख्यानं कर्तुमाचार्यवर्यैः ।। [4]

मानसंज्ञा को निर्धारित करने के लिए यावत्, तावत्, कालक, नीलक, अन्य वर्ण श्वेत, हरित, पीत आदि की कल्पनायें आचार्यों ने की हैं। अव्यक्त गणित के द्वारा आकाशीय भूगोलीय चमत्कार तथा अन्य प्रकार के चमत्कार दृष्टिभूत होते हैं। व्यक्त और अव्यक्त गणित में योग, वियोग, गुण इत्यादि का गणित समान ही है। भेद सिर्फ इतना है, कि व्यक्त में अंक और अव्यक्त में वर्ण की कल्पना की जाती है।

वैदिक वाङमय विश्व का प्राचीनतम साहित्य है, जिसमें वेद अथवा संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद एवं वेदाघõ सम्मिलित हैं। वैदिक वाङमय में ऋग्यजुसामथर्व चार संहिताएं प्रमुख हैं। इनमें ऋग्वेद संहिता सबसे प्राचीन है। ऋग्वेदादि संहिताओं में बहुत सी जगह पर गणित के बारे वर्णन प्राप्त होता है। वेदों के सामान्य अध्ययन के लिए छः वेदांगों का प्रार्दुभाव हुआ। जो इस प्रकार है- शिक्षा (Phonetics), कल्प (Ritualistics)] व्याकरण (Grammar), निरूक्त (Etymology), छन्द (Prosody)और ज्योतिष (Astronomy & Astrology) । कल्पो नाम विधिः के अनुसार कल्प में वैदिक यज्ञों और अन्य अनुष्ठानों का आयोजित और सम्पन्न करने के नियम तथा उनसे संबन्धित अन्य बातों कही गई हैं। कल्प के चार भेद कहे गये हैं- श्रौतसूत्र, शुल्बसूत्र, गृह्यसूत्र एवं धर्मसूत्र । श्रौतसूत्रों में यज्ञ विधि के बारे में, शूल्बसूत्रों में यज्ञ वेदि निर्माणादि के बारे में, गृह्यसूत्रों में गर्भाधानादि सोलह संस्कारों के बारे में और धर्मसूत्रों में धार्मिक रहस्यों के बारे में विस्तृत वर्णन किया गया है।

ज्यामिति का उद्भव भारत में यज्ञ की वेदी का निर्माण करने के सन्दर्भ में हुआ था। शुल्बसूत्र भारत की प्राचीन रचनायें हैं, जो यज्ञ के लिए वेदियों के निर्माण का वर्णन करती हैं, मूलरूप से ज्यामिति रचनाओं पर केन्द्रित है। शुल्ब शब्द की उत्पत्ति शुल्ब धातु से हुई है, जिसका अर्थ है नापना । वैसे

शुल्ब का सामान्य अर्थ रस्सी या डोरी की सहायता से जमीन नापने, निशान लगाने और चाप इत्यादि खींचने का काम करने से है। इस तरह के कार्य करने वाले को शुल्ब विद कहते हैं। सूत्र शैली (Abhoristic style) में लिखे जाने के कारण इन्हें सूत्र कहा गया। ये शुल्बसूत्र अपने लेखकों के नाम से जाने जाते हैं। प्राचीन क्रम से शुल्बसूत्र इसी प्रकार हैं- बौधायन शुल्बसूत्र, आपस्तम्ब शुल्बसूत्र, कात्यायन शुल्बसूत्र, मानव शुल्बसूत्र। इन शुल्बसूत्रें का रचना समय 1200 ई- से 800 ई-पू- माना गया है। इसमें बौधायन शुल्बसूत्र सबसे प्राचीन माना जाता है। धार्मिक, ऐच्छिक और पारलौकिक जीवन को समृद्ध, सुखी और सफल बनाने के लिए किये जाने वाले नित्य और काम्य यज्ञों की वेदियों के निर्माणादि गणितीय ज्ञान के लिए शुल्बसूत्रें का ज्ञान महत्त्वपूर्ण है। ये वेदांग ज्योतिष के आदर्श 'गणितं मूर्धनि स्थितम्' को चरितार्थ करते हैं। शूल्बसूत्रों में वर्णित प्रचुर गणितीय सामग्री हमें प्राचीन भारतीय गणित के बारे में विशेष ज्ञान प्रदान करती है। बौधायन ने अपने ग्रन्थ में एक सूत्र के रूप में विकर्ण के वर्ग का नियम दिया है। [5] दीर्घचतुरस्रस्याक्ष्पायारज्जुः पार्श्वमानी तीर्यग्मानी च यत्पृथग्भूते कुरुतस्तदुभयं करोति। अर्थात् एक आयत का विकर्ण उतना ही क्षेत्र इकठ्ठा बनाता है, जितने कि उसकी लम्बाई और चौड़ाई अलग-अलग बनाती है। यही पाइथेगोरस (छठी शताब्दी) का प्रमेय है। उन्होनें बताया कि एक पाइथेगोरियन त्रिभुज एक समकोण त्रिभुज होता है। जिसकी भुजाएं X, Y, Z पूर्णाकों के अनुपात में होती हैं। पाइथेगोरस प्रमेय के अनुसार निम्न प्रतिबन्ध को सन्तुष्ट करती है-

$$z^2 = x^2 - y^2$$
$$y^2 = z^2 - x^2$$
$$x^2 = y^2 + z^2$$

जो कि बौधायन ने पहले ही स्पष्ट कर दिया था, अतः स्पष्ट है कि इस प्रमेय की जानकारी भारतीय गणितज्ञों को पाइथेगोरस के पहले से थी । अतः इस प्रमेय को बौधायन प्रमेय कहा जाना चाहिए ।

संख्याओं के सही अवागमन करने के लिए और गणितीय समस्याओं के समाधान के लिए गणितज्ञों ने आश्चर्यजनक खोज की है, शून्य । शून्य का संस्कृत में अर्थ है- ख अर्थात् आकाश अथवा जो कुछ भी नहीं है, खालीपन । न होकर भी किसी भी अन्य संख्या की भान्ति एक संख्या है, जो छोटी से छोटी धनात्मक संख्या है। संख्या स्केल में इसका स्थान निश्चित है। यह +1 और -1 के मध्य में है। कहा जाता है, कि 'यदच्छा विन्यासे शून्य' अर्थात् अनजान एवं अज्ञात अंक के स्थान पर शून्य का प्रयोग किया जाता है। शून्य का प्रयोग यावद् तावद् अर्थात् जो है, वही के अर्थ में होता है। शून्य के आविष्कार ने विभिन्न प्रक्रियाओं को अत्यन्त सरल बना दिया। प्राचीन भारत में शून्य की जो आकृति अपनाई गयी, वही संसार के अधिकांश देशों में प्रचलित हुई।

सर्वप्रथम ऋग्वेद में संख्याओं के बारे में तथा दशमलवादि प्रक्रिया के बारे में वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद [6] में कई स्थानों पर हजार के लिए 'सहस्र' तथा दसहजार के लिए 'अयुत' का प्रयोग किया गया है। दशोत्तर अर्थात् दशगुणोत्तर गणना के लिए यजुर्वेद के निम्न मन्त्र के अनुसार एक, दश, शत, सहस्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्बुद, न्यर्बुद, समुद्र, मध्य, अन्त और परार्द्ध इस प्रकार की सूची प्राप्त होती है। इन तेरह नामों की सूची का उल्लेख यजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता जिसे शुक्लयजुर्वेद भी कहा जाता है, उसके 17 वें अध्याय में दी गई है। मन्त्र इस प्रकार है-

इमा मे अग्न इष्टका धेनवः सत्वेका च दश च शतं च शतं च सहस्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतं चार्बुदं च न्यर्बुदं च समुद्रश्च मध्यमं चान्तश्च परार्द्धश्चैता मे अग्न इष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रमुस्मिंल्लोके ।।

अर्थात् हे अग्निदेव ज्ञानवान्! विद्वान! पुरोहित! समान राज्य रूप महल में लगी, राज्य के नाना विभागों में नियुक्त शासक वर्ग, भृत्यवर्ग रूप ईटें सेनायें और प्रजायें अथवा इष्ट अर्थात् वेतन रूप से दिये गये अन्न या पिण्ड पर नियुक्त अमात्य, भृत्य आदि सब अथवा मेरे अभिलषित राज्यांग प्रजागण मैं मेरे लिए गौओं के समान समृद्ध और ऐश्वर्य को बढाने वाली और पुष्ट करने वाली हो। गोएं एक एक करके दस हों, दस दस से बढकर सौ, सौ से बढकर हजार, हजार से दस हजार, दस हजार से लाख, लाख से दस लाख, दस लाख से करोड, करोड से दस करोड, दस करोड से अरब, अरब से खरब, खरब से महापद्म, महापद्म से शंख (समुद्र), समुद्र से अन्त, मध्य और परार्द्ध हो जायें। ये गायें मेरी दान किए गए वेतन आदि पर बद्ध, प्रिय एवं संगठित राज्य की ईटों के समान प्रजागण दुधार गौओं के समान ऐश्वर्य रस देने वाली होकर इस लोक में सुखकारी हों। सम्बन्धित वैदिक ऋषि के नाम पर इसे मेघातिथिसूची भी कहते हैं। इसी सूची के सदृश तैत्तिरीय संहिता (कृष्णयजुर्वेद), शतपथ ब्राह्मण, काठकसंहिता, मैत्रयणीसंहिता, पञ्चविशब्राह्मण

(ताण्ड्यब्राह्मण), जैमिनिब्राह्मण उपनिषद् तथा शांखायनश्रौतसूत्र में भी प्राप्त होती है। इससे मेघातिथिसूची की लोकप्रियता स्वतः ही सिद्ध हो जाती है। करोड से आगे लक्ष गुणोत्तर गणनास प्रणाली का एक सुन्दर उदाहरण एवं प्रमाण हमें बाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड में भी प्राप्त होता है। यजुर्वेद के 15 वें अध्याय के एक मन्त्र में भी संख्याओं के सम विषम विभाग आदि के विषय में प्रमाण प्राप्त होता है। मन्त्र इस प्रकार है [7] -

एका च मे तिस्त्रश्च मे तिस्त्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे सप्त च मे सप्त च मे नव च मे नव च मे एकादश च मे एकादश च मे त्रयोदश च मे त्रयोदश च मे पञ्चदश च मे पञ्चदश च मे सप्तदश च मे सप्तदश च मे नवदश च मे नवदश च मे एकविंशतिश्च मे एकविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च मे सप्तविंशतिश्च मे सप्तविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च मे एकत्रिंशच्च मे एकत्रिंशच्च मे त्रयत्रिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।

चतस्त्रश्च मेऽष्टौ च मेऽष्टौ च मे द्वादश च मे द्वादश च मे षोडश च मे षोडश च मे विंशतिश्च मे विंशतिश्च मे चतुर्विंशतिश्च मे चतुर्विंशतिश्च मेऽष्टाविंशतिश्च मेऽष्टाविंशतिश्च मे द्वात्रिंशच्च मे द्वात्रिंशच्च मे षट्त्रिंशच्च मे षट्त्रिंशच्च मे चत्वारिंशच्च मे चत्वारिंशच्च मे चतुष्चत्वारिंशच्च मे चतुष्चत्वारिंशच्च मेऽष्टचत्वारिंशच्च मेऽष्टचत्वारिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।

निम्न मन्त्र से आधुनिक गणित के सिद्धान्त चलन कलन के अंक, वर्ग और अन्तर की प्रक्रिया को भी समझा जा सकता है। इसी प्रकार ही इसमें एक संख्या को दो बार कहा गया है, जिससे 1+ 1 = 2 एवं एक के आगे दो वा, दो से आगे एक जोडने पर तीन, इसी प्रकार आगे जोडने पर चार, पांच, छः आदि संख्याओं के बारे में जान सकते हैं। चतस्त्रश्च मे इत्यादि यजुर्वेद के मन्त्र से वर्ग की प्रक्रिया स्पष्ट प्रतीत होती है। जैसे - चार गुना चार सोलह, छः गुना छः छत्तीस इत्यादि उदाहरणों से स्पष्ट इसे इस प्रक्रिया से भी समझा जा सकता है, कि तीन-तीन (33), चार-चार (44), पांच-पांच (55) इत्यादि से भी समझा जा सकता है। भाग, वियोग आदि की प्रक्रिया भी अथर्ववेद में भी देखी जा सकती है। इसी प्रकार संख्याओं के गुणन आदि प्रक्रिया का भी उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त होता है, जो निम्न मन्त्र से स्पष्ट है-

> युवां देवास्त्रयः एकादशासः सत्यस्य ददृशे पुरस्तात्।। [8]

अर्थात् दिव्यगुणों को धारण करने वाले 'त्रयः एकादशासः' (3×11=33) अर्थात् देवतागण सत् गुणो से युक्त हैं, उन्होंने उस सत्य का दर्शन पहले ही कर लिया है। यहां 33 से अभिप्राय देवताओं की संख्याओं से है।

व्यक्त गणित में ईकाई, दहाई, सैंकडा प्रभृति के प्रयोग द्वारा योग, वियोगादि के अनेक गणित हैं, जिनका स्वरूप हमें वेदों के अवलोकन से दृष्टिगोचर होता है। दशमलव गणना पद्धति के लिए वेदों का आश्रय लिया जा सकता है। दशमलव बिन्दु लगाकर एक से छोटी प्रत्येक संख्या लिखी जा सकती है। इसका मूल ऋग्वेद के निम्न मन्त्र में है [9]-

> दशावनिभ्यो दशकक्ष्येभ्यो दशयोक्त्रेभ्यो दशयोजनेभ्यः ।
> दशाभीशूभ्यो अर्चताजरेभ्यो दशधुरो दशयुक्ता वहद्भ्यः ।।

यह दश से गुणित और विभाजित करने की विश्व को भारतवर्ष की सबसे देन विज्ञान के क्षेत्र में दाशमिक स्थान मान प्रणाली (Decimal Place Value System) है। संख्याओं (Numbers) को संख्याकों (Numberals) में लिखने की यह प्रणाली आज सारे विश्व में इस्तेमाल की जाती है। इसको दाशमिक स्थान मान प्रणाली इसलिए कहते हैं, क्योंकि इसमें आधार दश है, और अंको का मान उसके स्थान के उपर निर्भर करता है। संख्याओं को लिखने में 'अंकानां वामतो गतिः' नियम का पालन किया जाता है, अर्थात् अंक स्थानों की गणना दाई ओर से बाई ओर की जाती है। स्थान मान प्रणाली में सबसे ज्यादा महत्व शून्य संकेत का है, जिसके बिना प्रणाली निर्जीव है। इस भारतीय पद्धति की सबसे बडी विशेषता है, कि यह बहुत ही सरल किन्तु सुस्वस्थ सिद्धान्त पर आधारित है और उसके द्वारा बडी से बडी संख्याओं को आसानी से लिखा जा सकता है। वैदिक वाङ्मय में संख्याओं को निरूपित करने के लिए संख्याओं को भिन्न भिन्न नामों से कहा गया है, जैसे -ख, नभ, अम्बर, गगन के लिए शून्य, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी के लिए एक, चक्षु, नेत्र, नयन आदि के लिए दो, अग्नि, अनिल, पावक आदि के लिए तीन इत्यादि संज्ञाओं के साथ संख्याओं का निरूपण किया गया है।

हमारे यहां प्रायः सभी विज्ञानों और कलाओं का मूल स्रोत ब्रह्मा को माना जाता है। जिससे सारी सृष्टि की रचना की है। अरब के इतिहासकारों ने भी लिखा है, कि सृष्टि कर्त्ता ब्रह्मा के आदेश से ऋषियों की एक गोष्ठी में नौ संख्याओं को शून्य से छोडकर तथा ज्योतिषादि शास्त्रों का आविष्कार

किया है। महाभारत [10] के वन पर्व में भी इस प्रणाली से गणना करने की बात कही गई है। ऋग्वेद [11] के पुरुषसूक्त में पाद और त्रिपाद शब्दों का प्रयोग मिलता है, जिसका अर्थ है $\frac{1}{4}$ तथा $\frac{3}{4}$। मैत्रयणी संहिता [12] के अनुसार $\frac{1}{4}$ को पाद तथा $\frac{1}{8}$ को शफ, $\frac{1}{12}$ को कुष्ठ तथा $\frac{1}{10}$को कला कहा गया है। ऋग्वेद [13] के एक मन्त्र में भी कला और शफ शब्द का प्रयोग हुआ है। संख्या और भिन्न के सन्दर्भ में कला शब्द बहुत ही रोचक और अनेक अर्थो वाला है। संख्या रूप में कला का अर्थ 16 होता है। चन्द्रमा के घटते बढते क्रम रूप को भी कला कहते हैं। इस प्रकार चन्द्रमा में भी 16 कलायें मानी गई हैं। कला का व्यापक अर्थ भाग (Part) होता है। चाप के कोणीय माप के सम्बन्ध में एक कला (Minute) $\frac{1}{60}$ अंश के बराबर होती है। जबकि सारे चक्र में 3600 अंश माने जाते हैं।

रेखागणित का भी ज्ञान वेदों द्वारा संभव है, यजुर्वेद में यज्ञ मण्डप आदि के निर्माण में रेखागणित का प्रयोग होता था, जो निम्न मन्त्र से स्पष्ट है –

> इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः ।
> अयं सोमो कृष्णो अश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम ।। [14]

अर्थात् उक्त मन्त्र में व्यास और परिधि की परिभाषा के विषय में बताया गया है, जो यह पृथ्वी का चारों ओर घेरा है, उसे परिधि कहा गया और जो उपर से अन्त तक मिलने वाली जो पृथ्वी की रेखा है, वह व्यास कही गई। यह समस्त जगत की नाभि है। चन्द्र आदि भी इसी प्रकार की परिधि से युक्त हैं। वृष्टिकारक सूर्य, अग्नि, वायु की भी परिधि भी इसी तरह है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में भी परिधि आदि शब्दों का उल्लेख मिलता है, यथा –

> कासीत् प्रमा प्रतिमा किं निदानमाज्यं किमासीत् परिधिः,
> कः आसीत् प्र उग्रं किमुत्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे ।। [15]

त्रिकोणमिति एवं रेखागणित में उपयोगी वृत्त की परिधि 360 होती है, जिसका प्रमाण ऋग्वेद के निम्न मन्त्र से स्पष्ट होता है-

> द्वादशप्रधश्चक्रमेकं त्रीणि नाभ्यानि क उ तच्चिकेत ।
> तस्मिनृत्साकं त्रिशता न शघड्ढवार्पिताः षष्टिर्नचलाचलारूः ।। [16]

अर्थात् एक वृत्त में बारह परिधियां अर्थात् राशियां एक चन्द्र और तीन नाभियों से युक्त है। यह कौन नहीं जानता कि इस चन्द्र में तीन सौ साठ अर या खुटें हैं। षाष्ठिकपद्धति (Setagesimal) का अनुसरण करके पूरे वृत्तीय चाप को 360 भागों में बांटा गया है। विद्वान इसका आधार ज्योतिषीय आवश्यकता मानते हैं। ऐसा इसलिए कि सूर्य अपनी प्रत्यक्ष वृत्तीय कक्षा को एक वर्ष अर्थात् लगभग 360 दिनों में पूरा करता है। ज्योतिष में सूर्य के प्रत्यक्ष कक्षा वृत्त या क्रान्ति वृत्त को मेष, वृष, मिथुनादि बारह राशियों में विभाजित किया गया है। इसी का अनुसरण करते हुए किसी भी वृत्त को 12 राशियों में विभाजित करके उसके प्रत्येक भाग को राशि (Sign) कहा गया। इस प्रकार कोणीय माप एक राशि 30 भाग या अंश (Degree) को निरूपित करने लगी। भारतीय ज्योतिष और त्रिकोणमिति में निम्न संज्ञायों के विषय में कहा गया है-

1 चक्र	= 12 राशि (Sign)
1 राशि	= 30 अंश (Degree)
1 अंश	= 60 कला या लिप्ता (Minute)
1 कला	= 60 विकला (Second)
1 विकला	= 60 तत्परा (Third)
1 तत्परा	= 60 प्रति तत्परा (Fourth)

आधुनिक त्रिकोणमिति का फलक ज्या Sine के आदि स्वरूप का जन्म प्रत्यक्ष रूप से भारत में हुआ है। और ज्या के पुर स्थापन और भारतीय सिद्धान्त ग्रन्थों का गणित के इतिहास में प्रमुख योगदान है। आधुनिक समय में ज्या का अर्थ Sine तथा जीवा अर्थात् चाप का अर्थ Chord प्रचलित हो गया है। वास्तव में आधुनिक त्रिकोणमिति शब्द अंग्रेजी शब्द ट्रिगोनोमैट्री Trigonometry का शब्दिक अनुवाद है। इस विषय का प्राचीन नाम ज्यागणित अर्थात् ज्या पर आधारित गणित था। ज्यामिति शब्द इसी तरह अंग्रेजी शब्द ज्योमैट्री Geometry शब्द, जो भू माप से बना है, जो इसका शाब्दिक अनुवाद है।

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में यह विषय क्षेत्रव्यवहार अथवा क्षेत्रमिति के अन्तर्गत आता था। वास्तव में त्रिकोणमिति का विकास ज्योतिष के क्रिया कलापों को पूरा करने के लिए किया गया था। अतः इसके सम्बन्धित बहुत सी सामग्री

ज्योतिष के ग्रन्थों में विद्यमान है। ज्योतिष शास्त्र आधार होने के कारण ही चापीय त्रिकोणमिति का विकास सरल त्रिकोणमिति से पहले हुआ है। वर्तमान में प्रचलित चलन कलन अर्थात् गणित विज्ञान का सिद्धान्त जो अंको के वर्ग वृद्धि की गति सिद्ध करता है। यजुर्वेद में इसका प्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार के अनेक उदाहरणों से स्पष्ट है, कि गणित के विकास में वैदिक वाङ्मय का विशेष योगदान रहा है।

सन्धर्व ग्रन्थ्

1. सि.शि.म. गो.अ. गो.प्र. श्लो.सं. 6
2. सि.शि.म. गो.अ. गो.प्र. श्लो.सं. 7
3. बीजगणितम् श्लोक सं. 20
4. बीजगणितम् श्लोक सं. 21
5. बौधायन शुल्वसूत्र प्रथम अध्याय सूत्र सं- 11
6. ऋग्वेद 8.56.22
7. यजुर्वेद 15
8. ऋग्वेद 10.57.42
9. ऋग्वेद 10.94.7
10. महाभारत वन पर्व अ. 134 श्लोक. 16
11. पुरुषसूक्तम् ऋग्वेद संहिता 10.90
12. मैत्रायणी संहिता 3.7.7
13. ऋग्वेद 8.47
14. यजुर्वेद 23.62
15. ऋग्वेद 10.130-3
16. ऋग्वेद 1.164.48
17. सिद्धान्तशिरोमणिः भास्कराचार्यः,
18. बीजगणितम् भास्कराचार्यः
19. ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, महाभारतम्,
20. ऋग्वेदसंहिता, मैत्रायणीसंहिता